प्रवचन - १ , गाथा - ३२० दिनांक १०-८-१९७०

समयसार, ३२० गाथा, जयसेनाचार्य की टीका है। जरा सूक्ष्म है परन्तु समझने की चीज़ है। सबके पास पन्ने हैं, इसके लिये १५०० छपाये हैं, सबके पास रखेंगे (कि) किस शब्द का क्या अर्थ होता है ?

जयसेनाचार्य कृत तात्पर्यवृत्ति टीका — उसका अनुवाद

दिट्ठी सयं पि णाणं अकारयं तह अवेदयं चेव।
जाणदि य बंधमोक्खं कम्मुदयं णिज्जरं चेव॥

टीका-उसी अकृर्तत्वभोक्तृत्वभाव को विशेषरूप से दृढ़ करते हैं - क्या कहते हैं ? भगवान आत्मा ज्ञानानन्दस्वरूप है। उसका (स्वरूप) त्रिकाली आनन्द और ध्रुव है। उसका ज्ञान नहीं, उसका भान नहीं, वह पुण्य-पाप, राग-द्वेष आदि का कर्ता होता है और उनका भोक्ता होता है। समझ में आया ? जिसकी दृष्टि द्रव्य / वस्तु, जो ध्रुव चैतन्य महास्वयंभूरमण समुद्र.. चैतन्य का महास्वयंभूरमण समुद्र, ध्रुव, नित्य, अविनाशी (है) ऐसा पर्याय से रहित; ऐसी त्रिकाली चीज़ है, उस पर जिसकी दृष्टि नहीं; वह राग और पर्याय -एक समय का परिणाम और राग पर दृष्टि होने से, वह राग-द्वेष, पुण्य-पाप का कर्ता और उसका भोक्ता अज्ञानी होता है। समझ में आया ?

वस्तु का स्वरूप, भगवान आत्मा का स्वरूप और वस्तु के स्वरूप का दृष्टिवान, वह राग आदि का कर्ता नहीं और भोक्ता नहीं—ऐसा यहाँ सिद्ध करना है। समझ में आया ? अमृतचन्द्राचार्य की टीका पढ़ ली है। किन्तु जयसेनाचार्य की टीका में बहुत सूक्ष्म भर दिया है। दो बार तो वहाँ राजकोट (में) व्याख्यान हो गया है, यहाँ भी एक बार हुआ है। थोड़ा सूक्ष्म है परन्तु अब समझ में तो-ख्याल में तो ले कि जैनदर्शन में तत्त्व क्या है ? समझ में आया ?

यह आत्मा एक समय में पूर्णानन्द, शुद्ध चैतन्य ध्रुव सागर.. लो! यह तुम्हारा सागर आया।

मुमुक्षु : बहुत आनन्द आया।

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसे भगवान की जिसे दृष्टि नहीं, उसका जिसे ध्येय नहीं और दृष्टि का विषय द्रव्य को बनाकर परिणमन नहीं किया, वे सब मिथ्यादृष्टि हैं – ऐसा कहते हैं। समझ में आया? तो वह मिथ्या अर्थात् जिसकी (दृष्टि) सत्यस्वरूप भगवान आत्मा, ऐसी दृष्टि नहीं है, वह राग-द्वेष, उदय विकारभावरूप परिणमन करता है और वह मेरी चीज़ है—ऐसा करके उसका वेदन करता है, तो अनादि का कर्तृत्व और भोक्तृत्वभाव अज्ञान से उत्पन्न करके चार गति में उसके कारण परिभ्रमण करता है। समझ में आया? यहाँ तो जब धर्म होता है, तो कैसे होता है? वह बात चलती है। समझ में आया?

कहते हैं, देखो! **दिट्ठी सयं पि णाणं अकारयं तह अवेदयं चेव।** यह बात तो मूल पाठ में है परन्तु उसकी टीका करते हैं। दृष्टान्त दिया है। **जिस प्रकार नेत्र..** आँख-कर्ता। **दृश्यवस्तु का कर्ता नहीं होता।** आँख, आँख कहते हैं न? चक्षु, चक्षु देखनेवाली है, वह देखने की चीज़ को कर्ता-हर्ता, वह आँख नहीं है। समझ में आया? आँख है, वह देखनेवाली आँख / दृष्टा / कर्ता और वह दृश्य जो पदार्थ है, उसमें जाननेयोग्य अग्नि, शरीर, वाणी इत्यादि सब; उसको आँख करता नहीं है—ऐसा (मात्र) देखनेवाली है, परन्तु है, नहीं है, उसकी पर्याय उत्पन्न कर दे और पर की पर्याय को आँख अनुभव करे – ऐसा नहीं होता। यह तो दृष्टान्त है। यह तो अभी दृष्टान्त है, दृष्टान्त का सिद्धान्त बाद में लेंगे। पाठ में जो है, वह तो बाद में लेंगे। समझ में आया?

लोगों को समझने में सरल पड़े, इस कारण से आचार्य भगवान ने दृष्टान्त दिया है। समझ में आया? यह समझने की चीज़ है। अनन्त काल से इसने चैतन्य ज्ञायक ज्योत भगवान आत्मा पर जोर नहीं दिया, दृष्टि वहाँ लगायी ही नहीं; परिणाम पर लक्ष्य या राग पर लक्ष्य या निमित्त पर लक्ष्य (या) एक समय की प्रगट अवस्था पर लक्ष्य, वह सब मिथ्यादृष्टि का लक्ष्य है। समझ में आया? मूल बात है भगवान!

कहते हैं, यह नेत्र-देखनेवाली आँख / चक्षु, देखनेवाली चीज़ को उत्पन्न नहीं करता। उत्पन्न करता है? करता है? आँख, भोक्ता भी नहीं है।

देखो, जिस प्रकार है न? जिस प्रकार है न? तो जिस प्रकार का अर्थ दृष्टान्त है; उस

प्रकार, यह बाद में सिद्धान्त आयेगा। समझ में आया? जिस प्रकार, उस प्रकार (दृष्टान्त-सिद्धान्त)। **जिस प्रकार नेत्र कर्ता,..** कर्ता अर्थात् नेत्र देखनेवाला कर्ता अर्थात् आँख / चक्षु, वह **दृश्यवस्तु को,..** अग्नि शरीर, बर्फ, वाणी आदि चीज़ को। **संधुक्षण करनेवाला (अग्नि सुलगानेवाला) पुरुष अग्निरूप वस्तु को करता है..** जैसे अग्नि जलानेवाला, सुलगानेवाला.. भाषा है न, यह भाषा है न? समझ में आया? संधुक्षण करते हैं न संधुक्षण? हमारे काठियावाड़ी भाषा में वह गोबर का चूरा होता है, बारीक चूरा, उसमें अग्नि लगती है, क्योंकि अच्छी कठिन लकड़ी हो तो अग्नि पकड़ नहीं सकती परन्तु यह चूरा होता है न, बारीक चूरा कहते हैं न? बारीक-बारीक, तो वह अग्नि पकड़ सकता है, तो यह संधुक्षण करनेवाला, देखो! अग्नि को जलानेवाला, संधुक्षण करनेवाला अर्थात् अग्नि को जलानेवाला पुरुष **अग्निरूप वस्तु को करता है..** अग्निरूप वस्तु को बनाता है अग्नि, उस प्रकार कर्ता नहीं, उस प्रकार आँख दृश्य पदार्थ की कर्ता नहीं। कहो, समझ में आया?

मुमुक्षु : एक बार में समझ में आये ऐसा नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : बहुत बार आयेगा। कहाँ गये हीराभाई? यहाँ बैठे हैं। कहो, समझ में आया? हमारे दो पण्डित हैं न वे..

देखो, यहाँ अपने 'ज्ञानचक्षु में' आ गया है या नहीं? ज्ञानचक्षु - परन्तु यह सीधा समझे न पाठ से, तो जरा इसको ख्याल में आवे कि क्या चीज़ है। तो कहते हैं नेत्र / चक्षु करनेवाली.. क्या करनेवाली? देखने का कार्य करनेवाली। जैसे यह आँख देखने की चीज़ को, देखने का कार्य करे परन्तु देखने की चीज़ को बनावे, करे या देखने की चीज़ का आँख अनुभव करे - ऐसा नहीं होता। कहो, ठीक है? नन्दकिशोरजी! **संधुक्षण करनेवाला (अग्नि जलानेवाला)..** अग्नि जलानेवाला **पुरुष अग्निरूप वस्तु को करता है..** यह यहाँ बतलाना है न, इसलिए जरा। वास्तव में वह अग्नि को कोई करता नहीं, परन्तु यहाँ तो दृष्टान्त है न? लोग ख्याल करते हैं न कि लो भाई! इस भाई ने अन्दर गोबर के टुकड़े.. क्या कहते हैं? कण्डा, ऐसा चूरा करके अग्नि लगायी परन्तु अकेले अच्छे, कठोर ऐसे कठोर लकड़ियाँ हों तो उनमें अग्नि नहीं जलती, अग्नि नहीं पकड़ सके तो चूरा करके अग्नि जलायी, अग्नि की-ऐसा लोग देखते हैं, ऐसा दृष्टान्त दिया है। जैसे अग्नि जलानेवाला। अग्निरूप वस्तु को करता है। **उस प्रकार, करता नहीं है,..** आँख उस प्रकार से दृश्य वस्तु

को उत्पन्न करती है, कोई पर्याय (को उत्पन्न करती है) ऐसा नहीं है– ऐसा कहते हैं। समझ में आया? आँख चीज़ को तो उत्पन्न नहीं करती परन्तु जो चीज़ / दृश्य है, उसकी किसी अवस्था को उत्पन्न कर दे – ऐसा नहीं है। समझ में आया?

(अग्निरूप) वस्तु को करता है उस प्रकार,.. (आँख) **करता नहीं है,..** चक्षु कर्ता नहीं है, समझ में आया? जैसे अग्नि जलानेवाला अग्नि उत्पन्न करता है, वैसे चक्षु किसी पदार्थ को उत्पन्न करती है – ऐसा नहीं है। पृष्ठ सामने है न?

और तपे हुए लौहपिण्ड की भाँति.. अग्नि से उष्ण हुआ ऐसा लोहे का गोला। अग्नि से तप्तायमान हुआ लोहे का गोला। **पिण्ड की भाँति अनुभवरूप से वेदता नहीं है;..** वह लोहा उष्णता को वेदता–अनुभव करता है। अनुभव करता है का अर्थ—लोहा उष्ण हो गया है। समझ में आया? लोहे का गोाला अग्निमय उष्ण हो गया है; तो गोला उसका वेदन करता है, उसमें तन्मय हो गया है न? इस प्रकार आँख पर चीज़ को कुछ भी भोगती और करती नहीं है। कहो, बराबर है? इस रूप को वेदता नहीं, कौन? आँख, हों!

'जिस प्रकार' था न वह अब 'उस प्रकार' चक्षु के दृष्टान्त से, जलानेवाला अग्नि को जलाता है, ऐसे आँख परद्रव्य की पर्याय की उत्पत्ति नहीं करती और लोहा गोला अग्नि से तपा हुआ उष्णता को वेदता है अर्थात् तन्मय होता है; वैसे आँख किसी भी चीज़ को करती नहीं तथा उसको वेदती भी नहीं। अग्नि को देखने से अग्नि का वेदन है उसे? नहीं। समझ में आया? यह दृष्टान्त हुआ।

अब सिद्धान्त **उस प्रकार शुद्धज्ञान भी..** अब ऐसा क्या किया है, पाठ में तो ऐसा है, सुनो! **'दिट्ठी सयं पि णाणं'** दृष्टि है, वह स्वयं त्रिकाली जो ध्रुवज्ञान है। आहाहा! तो दृष्टि शब्द उसमें नहीं लिया, परन्तु उसका अर्थ यह हुआ कि जो सम्यग्दृष्टि है, उसकी जो दृष्टि है, वह ध्रुवज्ञान / त्रिकाली ज्ञान पर उसकी दृष्टि पड़ी है। समझ में आया? आहाहा! समझ में आया या नहीं वकीलजी? दृष्टि, शुद्धज्ञान अर्थात् त्रिकाली ज्ञान ध्रुव चैतन्य भगवान नित्यानन्द अविनाशी, एक समय की पर्याय से भी खाली–दूर। समझ में आया? यह शिक्षा तो केवलज्ञान के व्यायाम की बात है, भाई! यह केवलज्ञान कैसे उत्पन्न हो?— उसकी—केवलज्ञान उत्पन्न करनेवाले की दृष्टि कहाँ है? समझ में आया? उस धर्मी जीव

की दृष्टि, धर्मी ऐसे त्रिकाली ज्ञायकभाव पर दृष्टि है तो उसको यहाँ शुद्ध ज्ञान कहा। किसको ? त्रिकाली ज्ञानभाव को। समझ में आया ? है सामने पन्ने ? इसके लिये तो पन्ने बनाये (छपाये) हैं। भगवान ! यहाँ तो कहते हैं कि जैसे आँख, पर का कर्ता-भोक्ता नहीं; वैसे दृष्टिवन्त जीव, जो दृष्टि जिसकी ध्रुवज्ञान त्रिकाल ज्ञान पर पड़ी है, ऐसा धर्मी जीव.. वह धर्मी इसको कहते हैं कि त्रिकाली ज्ञान पर दृष्टि है, उसे धर्मी कहते हैं। समझ में आया ? यह तो मूल मुद्दे की बात है। जरा कठिन पड़े परन्तु भाषा में कोई कठिनाई न आवे, ऐसी सरल आती है परन्तु इसे समझने की दरकार तो करनी चाहिए या नहीं ? समझा सकता है कोई दूसरा ? समझ में आया ?

कहते हैं कि जिस प्रकार चक्षु, उस प्रकार शुद्धज्ञान.. दृष्टि नहीं लिया। पाठ में तो दृष्टि है। '**दिट्ठी सयं पि णाणं**' (दिट्ठी का अर्थ नेत्र किया) ठीक, नेत्र किया। परन्तु यहाँ दृष्टि लेना है। यहाँ जैसे दृष्टि वहाँ है, ऐसे यहाँ णाणं, णाणं का अर्थ जो त्रिकाल ज्ञान, ऊपर कहा है न वापस, नीचे (लेख) किया है भाई तुमने। मात्र दृष्टि ही नहीं परन्तु क्षायिकज्ञान भी.. वहाँ लिखा है देखो ! नीचे। यह बात तो हो गयी है पहले। इस क्षायिकज्ञान का अर्थ दृष्टि है। क्या कहा समझ में आया ?

धीमे से-शान्ति से यह तो अन्तर की चीज़ है। यह कहते हैं कि दृष्टि में यहाँ तो भाई ने कहा न, यहाँ दृष्टि में तो नेत्र का उतारा है परन्तु दृष्टि में तो दृष्टि ही उतारी है। यहाँ शुद्धज्ञान में.. क्योंकि बाद में कहते हैं कि मात्र दृष्टि ही नहीं, परन्तु केवलज्ञान भी अकर्ता-अभोक्ता है—ऐसा ही दृष्टिवन्त अकर्ता-अभोक्ता है, ऐसा यहाँ सिद्ध करना है। समझ में आया ?

भगवान आत्मा चैतन्यबिम्ब ध्रुव अविनाशी जिसका अंश जो त्रिकाल, उस पर जिसकी दृष्टि है, उसका नाम सम्यग्दर्शन है - दृष्टि का विषय। मिथ्यादर्शन का विषय एक समय की पर्याय और राग, वह कोई विषय हुआ नहीं वास्तव में तो। समझ में आया ?

मिथ्याश्रद्धा-मिथ्यादृष्टि का विषय वास्तव में यह इसका विषय ही नहीं है, ऐसा होने पर भी विषय कहना पड़ता है। कारण, विषय क्या उसका ? दृष्टि का विषय जो पूर्ण है—ऐसा विषय आना चाहिए; तो ऐसा मिथ्यादृष्टि का विषय वह है नहीं तो वास्तव में उसका विषय नहीं। ऐसा कहते हैं। आहाहा ! भाई क्या कहा ? समझ में आया ? (मिथ्यादृष्टि का कुछ विषय ही नहीं है) ऐई !

मुमुक्षु : मिथ्यादृष्टि का कोई विषय ही नहीं है।

पूज्य गुरुदेवश्री : विषय ही नहीं तथापि उसने विषय बनाया है। दृष्टि में वस्तु जो त्रिकालरूप प्रभु है, वह दृष्टि में आना चाहिए क्योंकि वह वस्तु ही त्रिकालध्रुव है—ऐसी दृष्टि का विषय वह तो यथार्थ है। मिथ्यादर्शन का कोई विषय ही नहीं क्योंकि एक समय की पर्याय, वह वास्तव में वस्तु ही नहीं। आहाहा! समझ में आया?

स्ववस्तु की अपेक्षा से-भगवान त्रिकाली द्रव्य ध्रुव की अपेक्षा से एक समय की पर्याय, राग और निमित्त वह सब अवस्तु है अर्थात् वास्तव में मिथ्यादृष्टि का विषय ही यथार्थ नहीं है। समझ में आया? अवस्तु हो गयी, लो! ऐसा कहते हैं, भाई! आहाहा! गजब बात, भाई! समझ में आया? धीरे-धीरे समझना, हों! समझ में आये ऐसी बात है। भाषा तो बहुत सादी है, भले भाव जरा (गम्भीर है)। लो, भाई! हमारे जयकुमारजी कहते हैं, भाव गम्भीर है। भाव तो साहेब भगवान, यह तेरी लीला! आहाहा! चैतन्य भगवान त्रिलोकनाथ जिसमें परिणाम भी जिसे स्पर्श नहीं करते, स्पर्श नहीं करते। समझे? छूते ही नहीं हैं। एई! और वास्तव में तो परिणाम और वर्तमान निर्मल पर्याय भी स्वद्रव्य की अपेक्षा से परद्रव्य-अद्रव्य हो गया। इसलिए जगत में मिथ्यादृष्टि का विषय नहीं है। समझ में आया?

सम्यग्दृष्टि का विषय हो सकता है, और है। आहाहा! भगवान आत्मा ज्ञायकस्वरूप, शुद्ध वस्तु नित्य प्रभु की दृष्टि हुई, वह दृष्टि नाम नहीं लिया परन्तु बाद में ले लिया कि हमने दृष्टि के विषय की बात की। ऐसे यहाँ क्षायिकज्ञान की बात समझना, उसमें से दृष्टि निकाल लिया। समझ में आया?

मुमुक्षु : श्रुतज्ञान और दृष्टि दोनों शामिल लेना।

पूज्य गुरुदेवश्री : शामिल लेना, ज्ञान और दृष्टि, ये कहा न? 'णाणं' जो त्रिकाली ज्ञान है, वही दृष्टि का विषय है। दृष्टि की बात मैंने पहले की, अब ज्ञान की बात करूँगा—ऐसा करके कहेंगे। करेंगे अर्थात् ऐसा करके कहेंगे। हिन्दी में थोड़ी-थोड़ी गुजराती अन्दर आती है। समझ में आया? आहाहा! अमृत का सागर डोलता है। समझ में आया?

भगवान अमृत का नाथ स्वयंभूरमण समुद्र अन्दर डोलता है। स्वयंभूरमण समुद्र जैसे है एक ही, एक ही चीज़ स्वयंभू शब्द में ऐसा आया एक ही चीज़, एक वस्तु भगवान

पूर्णानन्द प्रभु, वही वस्तु जगत में है। इसके अतिरिक्त एक समय की पर्यायादि कोई वस्तु नहीं, अवस्तु है। अवस्तु है। आहाहा! अवस्तु की दृष्टि को ही मिथ्यात्व कहते हैं। लालचन्दजी! आहाहा! यह दिगम्बर सन्तों की मस्ती है। आहाहा! समझ में आया? यह बात जैनदर्शन-दिगम्बर दर्शन के अतिरिक्त ऐसी बात कहीं नहीं होती। जहाँ अन्दर से अकेला समुद्र डोला है, भगवान! सुन तो सही! तू कहाँ रुक गया है और कहाँ तेरी चीज़ है! समझ में आया? तू कहाँ रुक गया है एक समय के राग में, या पर्याय में, भगवान! वह तेरी चीज़ नहीं, वह वस्तु ही नहीं पूरी, ऐसा यहाँ कहते हैं।

मुमुक्षु : अवस्तु है?

पूज्य गुरुदेवश्री : अवस्तु है। यथार्थ यदि विषय हो, तब तो मिथ्यात्व कहने में आता ही नहीं। आहाहा! आता है न भाई! उसमें-बन्ध अधिकार में!

मुमुक्षु : मिथ्यादृष्टि का कोई विषय ही नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : विषय ही नहीं। न्याय से देखो तो यह है। यदि उसका विषय हो तो अज्ञान कैसे कहलाये? समझ में आया? थोड़ा-थोड़ा समझना और नहीं (समझ में आये) तो रात्रि को (रात्रिचर्चा में) पूछना। रात्रि को तो सब मौन रहते हैं न!

मुमुक्षु : पूछने में डर लगता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : क्यों? सब मौन रहते हैं, मौन रहते हैं सब तो थोड़ा-थोड़ा अन्दर से न समझ में आवे वहाँ सामने प्रश्न करना। पौन घण्टा रखा है न रात्रि को। आहाहा!

यहाँ तो कहते हैं कि भगवान आत्मा.. जैसे दृष्टि पर को-अग्नि को नहीं करती और अग्नि को नहीं भोगती; वैसे भगवान आत्मा, यह शुद्धज्ञान, वह दृष्टि का विषय और वही वस्तु.. समझ में आया? शुद्ध ध्रुवज्ञान, ज्ञायकभाव, त्रिकाल ज्ञानभाव, ध्रुवभाव, वही वस्तु, वही सत्ता, वही आत्मा और उस आत्मा की दृष्टि करनेवाला-दृष्टि का विषय यथार्थ है तो वह दृष्टि यथार्थ सम्यग्दर्शन है। समझ में आया?

कहते हैं **शुद्धज्ञान भी..** यह में कहेंगे कि दृष्टि का विषय कहा तुम्हें, तो इसमें कहाँ आया? दृष्टि तो आयी नहीं इसमें? बाद में कहेंगे देखो, है न? मात्र दृष्टि नहीं परन्तु क्षायिकज्ञान भी निश्चय से.. समझ में आया? उसका अर्थ ही यह है कि यह पूर्ण ज्ञान जो

शुद्ध चैतन्यद्रव्य है, वही दृष्टि का विषय है, तो दृष्टि की ही बात हमने की थी। शुद्धज्ञान त्रिकाली भगवान, जिसमें केवलज्ञान की पर्याय तो अनन्तवें.. अनन्तवें.. अनन्तवें.. भाग गिनने में आती है, केवलज्ञान पर्याय, द्रव्य के आश्रय से। (अपेक्षा से)। द्रव्य का पलड़ा इतना जोरवाला है.. जोरदार पूरा पलड़ा है कि केवलज्ञान की पर्याय भी उससे अनन्तवें भाग ऊँचे रहती है और इसका पलड़ा नीचे बैठ जाता है। समझ में आया? केवलज्ञान को तो यहाँ सद्भूत व्यवहार कहा न भाई! सद्भूत व्यवहार.. व्यवहार.. व्यवहार..; व्यवहार अर्थात् वास्तव में अवस्तु। ले! ऐई!

मुमुक्षु : परिणाम सब व्यवहार ही होता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : परिणाम, व्यवहार अभूतार्थ, असत्यार्थ। असत्यार्थ का विषय करनेवाला मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया? आहाहा!

भगवान सत्य प्रभु सच्चिदानन्द वस्तु स्वयं निज स्वयंभूस्वरूप.. स्वयंभू, वहाँ प्रवचनसार में लिया है, वह तो पर्याय में लिया है। यहाँ तो स्वयंभू अपने से है-अनादि अनन्त—ऐसा शुद्धज्ञान भी, अथवा यह तो शुद्धज्ञान नहीं, उसका अर्थ यह है कि **अभेद से शुद्धज्ञान, परिणत जीव भी,..** त्रिकाली ज्ञान भी जैसे राग का कर्ता और भोक्ता नहीं, उसका अर्थ यह हुआ कि जिसकी दृष्टि में शुद्धज्ञान पूर्ण है—ऐसा आया, वह शुद्ध परिणत जीव भी इसमें लेना। आहाहा! समझ में आया? पहले समझ तो करे कि क्या चीज़ है?

मुमुक्षु : समझ न करे तो इसे परिणत कहाँ से आया?

पूज्य गुरुदेवश्री : परन्तु यह शुद्धज्ञान त्रिकाल शुद्धज्ञान है, उसकी दृष्टि में आये बिना यह शुद्धज्ञान इसे कहाँ से आया? समझ में आया? शुद्ध है परन्तु शुद्ध है, वह किसकी सत्ता में? ख्याल में आये बिना? तो कहते हैं कि हमने बात तो ऐसी की है कि शुद्धज्ञान भी-त्रिकाल ज्ञान भी जो दृष्टि का विषय है वह भी, राग और पुण्य और पाप, दया, दान, व्यवहाररत्नत्रय को नहीं करता। समझ में आया? और व्यवहारत्नत्रय आदि राग और दुःख को भी नहीं भोगता। आहाहा!

शुद्धज्ञान भी अथवा.. यह तो शुद्धज्ञान जिसकी दृष्टि में आया, उसे शुद्धज्ञान की परिणति पर्याय में प्रगट हुई है। समझ में आया? अभेद से, क्योंकि दृष्टिवन्त ने वस्तु को

दृष्टि में लिया तो यह परिणति है, वह द्रव्य की अभेद हो गयी; शुद्धपरिणति-सम्यग्दर्शन की पर्याय, द्रव्य से अभेद हो गयी। अभेद का अर्थ ?—पर्याय और द्रव्य दो एक नहीं हो जाते परन्तु वह पर्याय जो परसन्मुख में एकता थी, वह स्वसन्मुख से एकता हुई, इस अपेक्षा से अभेद में शुद्धज्ञान परिणत जीव भी.. समझ में आया ?

मुमुक्षु : एकता होती नहीं और फिर एकता कहना ?

पूज्य गुरुदेवश्री : एकता का अर्थ यह है कि जो पर्याय ऐसे राग के साथ में एकता थी-एकता मानी थी न, ऐसे राग के साथ पर्यायबुद्धि में पर के साथ, विकल्प के साथ दोष के साथ (एकता मानी थी), वह जो पर्याय थी, वह पर्याय यहाँ (अन्दर) झुक गयी तो ऐसे (पर में) एकत्व था, वह ऐसे (अन्दर में) एकत्व हुआ - ऐसा कहने में आता है। परन्तु पर्याय और द्रव्य एक हो जाते हैं - ऐसा नहीं है। समझ में आया ?

धर्मात्मा की मस्ती का विषय यह है ! समझ में आया ?

मुमुक्षु : दृष्टि का फेर..

पूज्य गुरुदेवश्री : हें.. दृष्टि का फेर। पूरा फेर है भगवान! यह तो बाहर की सिरपच्ची में पड़ा है तो उसमें तो कुछ धूल भी नहीं है। भगवान प्रभु अन्दर बिराजता है, पूर्णानन्द का नाथ ध्रुव पर मार थाप (कर दृष्टि); वह अभेददृष्टि हो गयी। अभेद हुई तो परिणमन में शुद्धता आ गयी। सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् आनन्द की परिणति प्रगट हुई। यह कहा है। **अभेद से शुद्धज्ञान, परिणत..** अकेला शुद्धज्ञान ध्रुव नहीं रहा परन्तु ध्रुव की दृष्टि हुई, इसलिए परिणति में भी शुद्धता-सम्यग्दर्शन, आनन्द आदि आ गये। ऐसा जीव.. समझ में आया ? **शुद्धज्ञान, परिणत जीव भी,..** गजब ! भाई ! अभेद, वह शुद्धज्ञान परिणत ! पहले शुद्धज्ञान कहा था न ? यह शुद्धज्ञान परिणत, वह त्रिकाली है, वह परिणमा। आगे इनकार करेंगे कि परिणति पर्याय की है। समझ में आया ?

शुद्धज्ञान जो पहले कहा, वह तो त्रिकाली.. ध्रुव त्रिकाली। अब यहाँ कहते हैं कि जब दृष्टि वहाँ हुई.. पर्यायबुद्धि छूट गयी, राग के निमित्त का लक्ष्य छूट गया, वह परिणाम में रमता था, वह दृष्टि छूट गयी; दृष्टि यहाँ आ गयी तो वह पर्याय, शुद्धज्ञान त्रिकाल के साथ अभेद हुई और शुद्धज्ञान परिणमित हुआ - ऐसा कहा। परिणमित हुई है तो पर्याय। भाई !

आगे कहेंगे कि ध्रुव कहीं परिणमता नहीं। जो शुद्धज्ञान त्रिकाल ध्रुव है, वह परिणमता नहीं-परन्तु समझाना कैसे ? कि परिणति बदल गयी। समझ में आया ?

मुमुक्षु : यह तो एक पल में समझ जाये ऐसा है ?

पूज्य गुरुदेवश्री : बहुत बात हो गयी है। बहुत बार आता है न! धीरे-धीरे तो आता है न यह।

कहते हैं कि **अभेद से शुद्धज्ञान,..** ऊपर शुद्धज्ञान लिया था, वह तो त्रिकाली है, भाई! शुद्धज्ञान तो त्रिकाली-ध्रुव है। फिर कहेंगे ध्रुव परिणमता नहीं, पर्याय परिणमति है। ध्रुव तो ऐसा का ऐसा कूटस्थ कायम रहता है, परन्तु यहाँ विकारी परिणति जो मिथ्यात्व में थी.. समझ में आया ? विकार मेरा है—ऐसा अनुभव करता था, तब तक मिथ्यादृष्टि था। समझ में आया ?

शुद्ध चैतन्य की दृष्टि हुई तो परिणति शुद्धज्ञान परिणमित हुआ। जो अकेला राग आदिरूप परिणमता था, विकाररूप परिणमन होता था, वह दु:खरूप-विकार दु:खरूप कर्ता अन्दर का सब दु:खरूप था सब। तो यहाँ कहा कि शुद्धज्ञान जो त्रिकाल है.. आगे इनकार करेंगे कि त्रिकाल ध्रुव परिणमता नहीं, पर्याय परिणमती है, परन्तु यहाँ समझाना है कि शुद्ध ध्रुव जो है, वह दृष्टि हुई तो परिणमन हुआ, तो ध्रुव परिणमा-ऐसा कहने में आता है। समझ में आया ? ए अमुलखचन्दजी! यह मार्ग है। देखो तो सही! आहाहा! वे सिरपच्ची में पड़े हैं-यह व्रत करना और दया पालना और यह करना.. अरे! सुन तो सही!

मुमुक्षु : यह व्रत समझ में आता है और सरल है।

पूज्य गुरुदेवश्री : यह समझ सरल अज्ञान है अनादि का, इसमें क्या है ?

मुमुक्षु : संसार बढ़ाने के लिये वहाँ रहना पड़ता है ?

पूज्य गुरुदेवश्री : संसार बढ़ाने के लिये, परन्तु वह कहीं इसका स्वरूप है ? संसार इसका स्वरूप है ? राग इसका स्वरूप है ? वह सब इसमें कहाँ ? आत्मा नहीं, वह तो अनात्मा बढ़ गया। आहाहा! समझ में आया ?

शुद्धज्ञान भी.. अथवा ऐसा तुरन्त ही लिया। **अभेद से शुद्धज्ञान, परिणत जीव**

भी,.. अर्थात् जहाँ चैतन्यभगवान दृष्टि में लिया; जो दृष्टि में राग और पर्याय लिया था, उस दृष्टि ने ध्रुव को लिया। वह पर्याय अपेक्षा से पलटा खाता है-गुलांट खाता है-ऐसा कहा। ध्रुव तो है वह है। समझ में आया? गजब बात भाई! ऐसी समझ करे, तब इसे सम्यग्दर्शन हो। अब ऐसा अभी इसका-सम्यग्दर्शन का ठिकाना नहीं और उसके पहले व्रत और चारित्र..

मुमुक्षु : अचारित्र।

पूज्य गुरुदेवश्री : भाई! यह तो सर्वज्ञ का पंथ है, वीतरागमार्ग का यह पंथ है। समझ में आया? तीन लोक के नाथ सर्वज्ञ परमात्मा तीर्थंकर हुए एक समय की पर्याय में, तो वे कहते हैं कि पर्याय से भी मेरी चीज़ तो भिन्न है। यह वस्तु कहने में आता है। आहाहा! समझ में आया? उस वस्तु का-पूर्णानन्द का भान होकर पर्याय में पूर्णता आयी, तो कहते हैं कि भगवान! तुम भी शुद्ध चैतन्यद्रव्य हो, उसकी दृष्टि लगा तो तुझे भी जो अशुद्धपरिणति-जो मिथ्यात्व, राग-द्वेष का परिणमन-विकार का परिणमन पर्याय में जो था, वह दु:खरूप परिणाम था, वह वस्तु नहीं; वह वस्तु का परिणमन नहीं। समझ में आया?

चैतन्य ज्ञायकभाव शुद्धज्ञान भी, अभेददृष्टि से ऐसा भान होकर शुद्धपरिणति / पर्याय हुई। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र जो है, वह शुद्धज्ञानपरिणत; शुद्धज्ञान त्रिकाल और परिणत में ये तीन बोल आये। समझ में आया? शुद्धज्ञान, यह ध्रुव और उसके साथ परिणति, वह पर्याय; वह पर्याय सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र एक साथ में। समझ में आया? आगे कहेंगे—उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक। समझे? उस भावरूप परिणति है। जब से प्रगट होता है उसको उपशम में, तो भी उसको आगमभाषा में उपशम, क्षयोपशम क्षायिक कहा और अध्यात्मभाषा में उसको शुद्धात्माभिमुखपरिणाम अथवा शुद्धोपयोग कहा। उसका यह अर्थ हुआ कि सम्यग्दर्शन प्रगट होने में अन्दर शुद्धोपयोग है। आहाहा! समझ में आया? आगे बहुत स्पष्टीकरण करेंगे।

उपशम, क्षयोपशम, क्षायिक, यह तीन मोक्ष का मार्ग है तो उसको अध्यात्मभाषा में शुद्धात्माभिमुखपरिणाम (कहा है)। शुद्धात्माभिमुखपरिणाम उपशमभाव में भी हुआ, क्षयोपशम में भी हुआ और क्षायिक में भी हुआ। अत: शुद्धात्माभिमुखपरिणाम, वह शुद्धोपयोग हुआ। पण्डितजी! यह तो अकेला माल आयेगा। धीरे-धीरे आता है न? समझ

में आया ? दृष्टान्त तो आँख का दिया थोड़ा, दृष्टान्त तो दृष्टान्त के लिये दृष्टान्त नहीं है, सिद्धान्त के लिये दृष्टान्त है।

श्रोता : समझना सरल पड़ता है।

पूज्य गुरुदेवश्री : इसे जरा समझने के लिये सरल पड़ता है।

भगवान! तेरी चीज़ जो परमानन्द की मूर्ति, अकेला सुख का सागर, ऐसे सुख के सागर पर जहाँ दृष्टि पड़ी, तब इसके परिणमन में आनन्द का-दर्शन-ज्ञान-चारित्र का परिणमन हुआ। वह शुद्धज्ञान परिणमा। वह आनन्द था, वह परिणमा—ऐसा अभी कहने में आता है। पोपटभाई! थोड़ा-थोड़ा ख्याल में तो लो, ख्याल में तो लो कि यह कुछ कहते हैं और यह कोई मार्ग है। समझ में आया ? ऐसे ही ओघे-ओघे (ऊपर-ऊपर से) अनादि से चलता है, ऐसा नहीं चलता मार्ग। भाई! मार्ग तो अन्दर का व्यक्त होना चाहिए।

मुमुक्षु : ओघे-ओघे अर्थात् ?

पूज्य गुरुदेवश्री : ओघे-ओघे अर्थात् जाना हो पश्चिम में और जाये पूर्व में, ऐसे -ऐसे विचार किये बिना चले कि अरे ? यहाँ कहाँ निकले, अपने को तो ऐसे जाना था। भान बिना चलना, वह ओघे-ओघे (कहलाता है)।

मुमुक्षु : हिन्दी में बताओ महाराज, हिन्दी में।

पूज्य गुरुदेवश्री : ओघे, तुम्हारी क्या भाषा होगी, हमें क्या पता पड़े ? ओघे-ओघे तुम्हारी भाषा में समझ लेना।

मुमुक्षु : शास्त्र में तो ओघ संज्ञा आती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : आती है किन्तु कोई भाषा होगी न हिन्दी में ? ओघ अर्थात् कुछ भी समझे बिना कुटारा किये करना।

मुमुक्षु : दूसरे करते हों ऐसा किये करना, उसका नाम ओघ।

पूज्य गुरुदेवश्री : उसका नाम ओघ।

मुमुक्षु : समझे बिना दूसरे करते हों, वैसा करना, गाडरिया प्रवाह।

पूज्य गुरुदेवश्री : भेड़ है न ? भेड़ का दृष्टान्त दिया जाता है। यह भेड़ है न भेड़ ?

भेड़ तो, भेड़ चलती है न एक, तो दूसरा भेड़ उसकी तरह नीचे देखकर चलता है परन्तु इस कुएँ में गिरेगा इसका तो पता नहीं। ऐसा।

मुमुक्षु : इसका मतलब ओघे-ओघे।

पूज्य गुरुदेवश्री : इसका नाम ओघे-ओघे। भेड़ चलती है न ऐसे नीचे कुएँ में नजर रखकर। दूसरा भी उसकी कुएँ में नजर है। वह जहाँ कुएँ में पड़े तो यह भी कुएँ में पड़े। भेड़िया जहाँ चले वहाँ चले, अज्ञानी जहाँ चले वहाँ चले। मार्ग का कुछ पता नहीं होता (भेड़चाल)। भेड़चाल, ऐसे कुछ होता अवश्य है न सर्वत्र। (भेड़चाल) बराबर।

कहते हैं कि **शुद्धज्ञान भी..** ऐसे उस नेत्र के साथ कहना है न? नेत्र के साथ दृष्टान्त है न इसलिए 'भी', **शुद्धज्ञान भी..** त्रिकाली शुद्धज्ञान **अथवा अभेद से शुद्धज्ञान, परिणत..** ज्ञान की प्रधानता से बात की है, बाकी सारा द्रव्य जो ध्रुव है, उसको यहाँ शुद्धज्ञान कहने में आया है। ज्ञानप्रधान कथन लेना है न? ज्ञान महा असाधारण गुण है न? तो ज्ञायक से लिया है, ज्ञायक। ऐसे नहीं तो है तो सब गुण उसमें है, शुद्धज्ञान त्रिकाल ध्रुववस्तु, ऐसी दृष्टि करनेवाला शुद्धज्ञानपरिणत। शुद्ध ध्रुव त्रिकाल, उसमें वर्तमान परिणमन सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र का, स्व के आश्रय से-ध्रुव के आश्रय से जो परिणति हुई, वह **जीव भी,..** नेत्र के दृष्टान्त के साथ शुद्धज्ञान भी और यह शुद्धज्ञानपरिणत जीव भी, ऐसा। **स्वयं शुद्ध-उपादानरूप से करता नहीं है..** यह उपादान पर्याय की बात है। आगे आयेगा उपादान ध्रुव का। समझ में आया?

क्या कहते हैं? आत्मा, वस्तु जो त्रिकाल है। ध्रुव की-अपनी महासत्ता का जहाँ दृष्टि में स्वीकार किया, तब सम्यग्दृष्टि हुआ, तब उसके परिणमन में निर्मलता आयी, शुद्ध परिणमन हुआ तो वह शुद्ध परिणमनवाला जीव स्वयं शुद्ध उपादानरूप से-उस निर्मल शुद्ध पर्याय से-शुद्ध निर्मल पर्याय से.. यह शुद्ध उपादान अर्थात् पर्याय। आगे शुद्ध उपादान द्रव्य आयेगा। समझ में आया?

तुम्हारे कल आया था न? त्यक्त और अत्यक्त आया था या नहीं? परिणाम त्यक्त है और त्रिकाली, वह अत्यक्त है। वहाँ छोड़ना-फोड़ना की बात (नहीं है)। कोई प्रश्न करता था न? छोड़ने की बात है? भगवान आत्मा ध्रुव कायम रहता है। अत्यक्त अर्थात्

कभी दूसरा-दूसरेरूप नहीं होता और परिणाम है, वह त्यक्त-एक समय का परिणाम छूट जाता है, दूसरा आता है। समझ में आया? यहाँ कहते हैं कि इस शुद्ध उपादानरूप से द्रव्य और गुण तो नहीं अब यहाँ। समझ में आया?

धर्मी जीव को पर्याय में जो शुद्ध उपादान प्रगट हुआ, परिणति प्रगट हुई.. समझ में आया? **शुद्ध-उपादानरूप से करता नहीं..** आहाहा! द्रव्य-गुण तो करता नहीं, परन्तु धर्मी की निर्मलपर्याय हुई, वह राग का कर्ता और राग का भोक्ता नहीं। इस महाव्रत के विकल्प का वह कर्ता नहीं-ऐसा कहते हैं।

मुमुक्षु : और भोक्ता भी नहीं, ऐसे ही होता है न!

पूज्य गुरुदेवश्री : पर तो यह विकार है, परद्रव्य है। समझ में आया? लोगों को ऐसा हो जाता है कि अपने को ऐसा समझ में आये? न समझ में आये ऐसा हो.. यह तो मूल चीज़ है। मूल चीज़ समझ में न आये तो तुझे जाना कहाँ है? करना क्या है? समझ में आया? शास्त्र बहुत पढ़ लिये और शास्त्र ऐसा तो हो गया उसमें? उसमें तो कुछ है नहीं। है तो इस आत्मा में है अन्दर सब बात। समझ में आया? शास्त्र पढ़ लिया तो वह ज्ञान भी ज्ञान नहीं। वह शुद्धपरिणति नहीं। आहाहा! परिणति समझे? पर्याय, अवस्था शुद्ध नहीं। अरे! गजब बात भाई!

चैतन्य भगवान पूर्णानन्द आत्मा का परिणमन हुआ, दृष्टि हुई तो वह पर्याय है। दृष्टि-पर्याय में परिणमन हुआ, परिणमन हुआ ऐसा। दृष्टि लगाई तो परिणमन हुआ। ऐसा स्वयं शुद्ध उपादान धर्मी जीव की दृष्टि ध्रुव पर होने से उसकी परिणति में सम्यग्ज्ञान और शुद्धता होने से वह शुद्धता परिणति, व्यवहाररत्नत्रय को भी करती नहीं। लालचन्दजी! गजब बात भाई!

मुमुक्षु : सत्य बात गुरुदेव!

पूज्य गुरुदेवश्री : आँख का दृष्टान्त दिया है न। वह तो जानता है। न समझ में आये ऐसी पहले शल्य नहीं रखना। यह तो केवलज्ञान लेने की ताकतवाले आत्मा को न समझ में आये, ऐसा कैसे? आत्मा को हीन माने, अपने को पामर माने..

मुमुक्षु : द्रव्य पामर कैसे होगा?

पूज्य गुरुदेवश्री : पामरता नहीं होती। प्रभु! तुझे पामरता नहीं होती। तू तो प्रभु का प्रभु है। आहाहा! प्रभु का प्रभु अर्थात् केवलज्ञान आदि प्रभु हुए, उसका भी प्रभु, उससे भी अधिक तेरा द्रव्य है। शोभालालजी! आज चार दिन तो हो गये, तुम्हारे भगवानदास तो आये नहीं।

मुमुक्षु : आज आते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : ठीक।

यह हिन्दी चलती है तो हिन्दी तो पीछे रुक गयी। कहते हैं, यह स्वयं अर्थात्? जो आत्मा शुद्ध ध्रुव की दृष्टि हुई, सम्यग्दर्शन हुआ—ऐसी शुद्धपरिणति हुई, वह जीव भी स्वयं अपने से—शुद्ध उपादानरूप से निर्मल सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र के वीतरागी परिणाम ध्रुव के आश्रय से हुए, वे परिणाम भी करता नहीं है। आहा! इस राग का करता नहीं, जिस भाव से तीर्थंकरगोत्र बँधे, उस भाव का भी कर्ता धर्मी नहीं है। उसकी-धर्मी की पर्याय कर्ता नहीं है। समझ में आया?

वह जीव भी.. एक रखा है वहाँ, क्योंकि परिणति का पहला बोल है न? समझ में आया? परिणति का पहला बोल, इसलिये वहाँ एक रखा है। इस पूरे अधिकार में इस परिणति के तेरह बोल आयेंगे और ध्रुव के नौ बोल आयेंगे। कहते हैं कि करता नहीं। आहाहा! यहाँ तो अभी राग करना और ऐसा करना और ऐसा करना.. अभी तो पर का कर्ता.. वे तो-एक पण्डित तो ऐसा कहते हैं (कि) पर का कर्ता न माने वह दिगम्बर जैन नहीं। गजब बात चलती है। ऐसा करके यहाँ के-सोनगढ़वालों को छोड़ देना है। ऐसा कि यह नहीं। अरे भगवान! तू कहे इसलिए टूट जायेंगे? आहाहा! सुन तो सही, दिगम्बर जैन किसे कहते हैं? जिसकी दृष्टि और जिसका निर्मल ज्ञान, व्यवहाररत्नत्रय को न करे, उसका नाम दिगम्बर जैन है। समझ में आया? आहाहा!

पर का कर्ता तो कहीं रह गया! पर की दया पालूँ और पर की हिंसा करे, अमुक और अमुक.. वह तो कहीं रह गया। यहाँ तो कहते हैं कि उसकी पर्याय में विकृतभाव है, वह विकृत वस्तु ही परद्रव्य है। जहाँ स्वद्रव्य ज्ञायकभाव की दृष्टि हुई और उसका परिणमन अर्थात् निर्मलता पर्याय में व्यक्त हुई, वह निर्मल व्यक्त पर्याय शुद्ध उपादान कहने

में आती है। 'क्षणिक शुद्ध उपादान।' समझ में आया? ध्रुव-त्रिकाली उपादान आगे आयेगा? स्पष्ट किये बिना तो समझ में आता नहीं और यह तो अकेला मक्खन है। जैनदर्शन का अकेला रहस्य-मक्खन है। कहते हैं। मक्खन समझते हैं न? मक्खन। आहाहा! धर्मी जीव तो उसको कहते हैं कि जिसके परिणमन में निर्मलता आयी है। जैसा द्रव्य निर्मल और शुद्ध है, ऐसी पर्याय में निर्मलता आयी है, वह निर्मलपर्याय, मलिनपर्याय को नहीं करती। समझ में आया? आहाहा! वह निर्मलपर्याय, दोष को नहीं करती। है?

मुमुक्षु : निर्मलपर्याय किस प्रकार करे?

पूज्य गुरुदेवश्री : और निर्मलपर्याय, राग को नहीं वेदती, अनुभव नहीं करती; अनुभव तो आनन्द का हुआ, यह परिणति उसकी है, यह व्यवहार है; निश्चय तो ध्रुव है, क्योंकि परिणाममात्र व्यवहार है न? आहाहा! गजब!

मुमुक्षु : यह तो एक समय की पर्याय है।

पूज्य गुरुदेवश्री : ऐसा व्याख्यान किस प्रकार का? कोई कहता है कि भाई! व्रत करना, महाव्रत करना, यह करना और ऐसा खाना, ऐसा पीना.. यह सब क्या? यह सुन तो सही यह सब। आहाहा! भगवान पूर्णानन्द के नाथ में एकाकार होना, उसमें लिपट जाना, वह तेरा व्रत है; बाकी सब अन्दर अव्रत है। समझ में आया?

ओहो! आचार्यों ने कितना काम किया है! दिगम्बर सन्त जंगल में रहते हैं। जंगल में रहकर परमेश्वर के साथ बातें करके, परमेश्वर को नीचे उतारा है।

मुमुक्षु : स्वयं ही परमेश्वर हैं न!

पूज्य गुरुदेवश्री : ऊपर तू रहे और सिद्ध न हों हम यहाँ। यह परमेश्वर हम यहाँ आहाहा! **शुद्ध-उपादानरूप से करता नहीं है और वेदता नहीं है..** धर्मी सम्यग्दृष्टि जीव, व्यवहार के विकल्प को करता नहीं और व्यवहार के विकल्प को भोगता नहीं, क्योंकि उसकी पर्याय में वह चीज़ नहीं; द्रव्य-गुण में तो नहीं। आहाहा! आहाहा! है यह बात **''दिट्ठी सयं पि णाणं अकारयं तह अवेदयं''** इतना कहा। समझ में आया?

अथवा अब दूसरा **'दिट्ठी सयं पि णाणं'** यह किसलिए लिखा है? जैसे केवलज्ञान -क्षायिकज्ञान है, वह भी कोई रागादि है ही नहीं तो कर्ता नहीं, ऐसे। यहाँ तो है, तथापि कर्ता

नहीं—ऐसा सिद्ध करने को केवलज्ञान का दृष्टान्त दिया है। समझ में आया? **अथवा पाठान्तर : 'दिट्ठी सयं पि णाणं' उसका व्याख्यान.. मात्र दृष्टि ही नहीं,..** देखो! उसमें-ज्ञान में दृष्टि का विषय लिया था.. समझ में आया? वहाँ तो दृष्टि तो आयी नहीं है। समझ में आया? **मात्र दृष्टि ही नहीं,..** अर्थात् दृष्टि जो है, वह शुद्ध चैतन्य पर पड़ी है; इसलिए वह दृष्टि और दृष्टि का विषय, वह राग का कर्ता और भोक्ता नहीं, परन्तु इतनी बात नहीं है। यहाँ तो कहते हैं ज्ञान का विषय, **परन्तु क्षायिकज्ञान भी..** उस ज्ञान की परिणति में राग होने पर भी परिणति (में) करता नहीं—ऐसा सिद्ध करने को केवलज्ञान का दृष्टान्त लिया है। जैसे केवलज्ञान, राग का कर्ता और भोक्ता नहीं है; वैसे नीचे सम्यग्दृष्टि जीव-शुद्धपरिणतिवन्त (जीव भी) राग का कर्ता और भोक्ता नहीं है। समझ में आया?

मात्र दृष्टि ही नहीं, परन्तु क्षायिकज्ञान भी.. क्षायिकज्ञान भी अर्थात्? वह तो सही भाई...

मुमुक्षु : तब तो कहलाये न, 'भी' कब कहलाये?

पूज्य गुरुदेवश्री : भी कहा है न! भीखाभाई! यह बहुत सूक्ष्म है।

मुमुक्षु : पूरा-पूरा लक्ष्य रखता हूँ।

पूज्य गुरुदेवश्री : क्या कहा?

मुमुक्षु : पूरा-पूरा लक्ष्य देता हूँ।

पूज्य गुरुदेवश्री : लक्ष्य तो वहाँ-द्रव्य में देना चाहिए - ऐसा कहते हैं।

मुमुक्षु : पहले तो आपकी वाणी में लक्ष्य रखना न?

पूज्य गुरुदेवश्री : पहले-बाद कुछ है ही नहीं। कहो, समझ में आया? आहा..हा..!

कहते हैं, मात्र दृष्टि ही नहीं, अर्थात् शुद्धज्ञान त्रिकाली की जो दृष्टि हुई, उसका जो ज्ञान परिणत हुआ वह राग और विकल्प का कर्ता नहीं है। उसी प्रकार **क्षायिकज्ञान भी..** आहाहा! क्षायिकज्ञान अर्थात् केवलज्ञान; केवलज्ञान-केवलदर्शन परमात्मा पूर्ण दशा.. अपूर्ण दशावाले भी कर्ता-भोक्ता नहीं, वैसे पूर्ण तो कर्ता-भोक्ता नहीं, उनके साथ में मिलाया इसे। समझ में आया? आहा! यह सम्यग्ज्ञानदीपिका में आता है। यह बोल। सम्यग्ज्ञानदीपिका है न!

मुमुक्षु : जी हाँ, अभी प्रकाशित हुई है।

पूज्य गुरुदेवश्री : सम्यग्ज्ञानदीपिका ?

मुमुक्षु : हाँ, भावनगर से, भावनगर में प्रकाशित हुई है।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, वह प्रकाशित हुई हिन्दी, हिन्दी; हीरालाल की ओर से ?

मुमुक्षु : हाँ, वर्तमान हिन्दी में है।

पूज्य गुरुदेवश्री : उसमें एक बोल है कि कोई भी प्राणी, सिद्ध से एक क्षणमात्र टिंकारमात्र भी भिन्न रहे तो मिथ्यादृष्टि-पापी-संसारी है। एक जरा भी सिद्ध से भिन्न रहे अर्थात् जैसे सिद्ध हैं, वे जानते और देखते हैं—ऐसा जानना-देखना छोड़कर एक टिंकारमात्र भी विकल्प का कर्ता हो तो मिथ्यादृष्टि-पापी-संसारी है - ऐसा दृष्टान्त दिया है सम्यग्ज्ञानदीपिका में। वह धर्मदास क्षुल्लक (ने दिया है)। यहाँ तो यह बात बहुत बार आ गयी है। समझ में आया ? आहाहा!

इतना अधिक अन्तर ? यही यहाँ दृष्टान्त दिया है। कहते हैं, केवलज्ञानी भी कुछ कर्ता और भोक्ता नहीं, वैसे सम्यग्ज्ञानी भी उनके जैसा ही है। ज्ञाता-दृष्टा (ही है) वह भी राग और विकल्प आदि का कर्ता-भोक्ता नहीं है। धन्नालालजी! आहाहा! कहते हैं कि मात्र दृष्टि ही नहीं परन्तु क्षायिकज्ञान भी, ज्ञान का लिया है न ?

'दिट्ठी सयं पि णाणं' यह वापस ज्ञान, दृष्टि का विषय और ज्ञान पूरा किया और यहाँ फिर पर्याय में ज्ञान पूरा हुआ, उस पर्याय में जो ज्ञान पूर्ण-केवलज्ञान हुआ वह **भी निश्चय से कर्मों का अकारक..** है। वास्तव में तो उनको तो है ही नहीं-ऐसा कहते हैं। सर्वज्ञ को रागादि है नहीं तो कर्ता परिणमन है ही नहीं - ऐसा कहना है। क्या कहते हैं ? कि सर्वज्ञ परमात्मा केवलज्ञानी को राग का परिणमन नहीं है, भाई! क्या कहा, समझ में आया ? यह दृष्टान्त क्यों दिया उसके साथ ? (केवलज्ञानी को) ऐसे राग का परिणमन नहीं, इसलिए कर्ता नहीं; वैसे शुद्धज्ञानी सम्यग्दृष्टि जीव को भी राग का परिणमन नहीं। समझ में आया ? गजब बात की भाई!

क्षायिकज्ञान भी वास्तव में रागादि का अकारक, अर्थात् रागरूप परिणमन ही नहीं, लो! और **अवेदक..** वह भी राग का वेदक नहीं। वहाँ भी अकेला आनन्द का वेदन है,

केवलज्ञान में तो अकेला ज्ञान पूर्ण और आनन्द का वेदन; वह भी जैसे करता अर्थात् परिणमन नहीं; वैसे सम्यग्दृष्टि का दृष्टि ध्रुव पर परिणमन होने से उसको भी राग का परिणमन और राग का वेदन है नहीं।

यह चीज ऐसी है—ऐसा पहले ख्याल में, दृष्टि में तो ले! आहाहा! अरे भगवान! कितने ही ऐसा कहते हैं—यह तुम केवली के साथ बातें करते हो, सिद्ध के साथ? नीचेवाले को तुम सिद्ध जैसा बना देते हो—ऐसा कितने ही कहते हैं? यह तो केवलज्ञान होने की, केवलज्ञान की वार्ता है। यहाँ तो केवलज्ञानी की बातें हैं भाई! केवलज्ञानी कहो या अकेला केवलज्ञान। तू त्रिकाल है, यह उसकी बात है ले! बहुत से ऐसा कहते हैं कि यह तो केवलज्ञान की बातें हैं। आहाहा! बड़ी-बड़ी बातें कहते हैं। बड़ी नहीं, यह तो तेरे हित की बातें हैं। सुन न अब! समझ में आया? बहुत से ऐसा कहते हैं। नहीं बाहर से आते है वे? (-ऐसा कहते हैं)। केवलज्ञान की बातें करते हैं, सिद्ध की-शुद्धनय की। यह तो केवलज्ञान हो वहाँ हो। यहाँ नीचे कहाँ शुद्धनय होता है?

अवेदक - **कर्मों का अकारक तथा अवेदक भी है।** इस प्रकार उसके साथ में लिया। जैसे शुद्धपरिणत जीव अकारक और अवेदक है, वैसे यह भी अकारक और अवेदक है-यह भी अकारक और अवेदक।

मुमुक्षु : उसके साथ अवेदक भी है।

पूज्य गुरुदेवश्री : अवेदन, उसको राग का वेदन नहीं है। आहाहा!

मुमुक्षु : अकारक पूरा नहीं होता।

पूज्य गुरुदेवश्री : वेदन, वेदन भी। समझ में आया? इतना भी नहीं। आगे विशेष कहेंगे.. लो!

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)